ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 135-136**

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-18, No.- II, Issues-32, YEAR- April-June-2024

बौद्धकाल में नारी शिक्षा

डॉ0 अमृत आनन्द सिन्हा बांसडीह, बलिया (उ0प्र0), भारत

Received-03.06.2024, Revised-10.06.2024, Accepted-15.06.2024 E-mail: amritanandballia@gmail.com

सारांशः *बौद्ध युग में शिक्षा का प्रधान उद्देश्य आजीविकोपार्जन करना मात्र था। इन शिक्षाओं में शिल्प एवं कला की शिक्षा प्रमुख थी। शिक्षा – दीक्षा प्रदान करने हेतु कलाचार्य की नियुक्ति का भी उल्लेख है। बौद्ध बिहारों एवं मठों में भी अर्हत एवं उपाध्याय तथा आचार्य शिक्षा देते रहते थे।*

राजा रुद्रायन के अन्तःपुर में बौद्ध भिक्षुणी शैली को भगवान बुद्ध ने शिक्षा लेने के लिए भेजा था।[1] शिक्षकों को आचार्य, उपाध्याय तथा गुरु कहते थे। इनमें उपाध्यायिकायें भी होती थीं।2

पद्मावती नामक उपाध्यायिका का उल्लेख किया गया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि स्त्रियाँ भी अध्यापन कार्य करती थीं।[3] शुंग कालीन जातक के एक प्रसंग में विदुषी महिला से पण्डितों के शास्त्रार्थ करने तथा पराजित होने का उल्लेख मिलता है। उस समय के स्त्रियों के शास्त्रीय – संगीत की कुशलता का परिचायक है। थेरीगाथा में ऋषिदासी नामक एक भिक्षुणी का उद्गार इस प्रकार है – ''मेरे पिता ने मेरा विवाह कर दिया। अपने घर में प्राप्त शिक्षा के अनुसार में प्रतिदिन सायंकाल एवं प्रातःकाल अपने सास – ससुर को प्रणाम करती हूँ। नतमस्तक होकर उनकी चरण वन्दना करती।।....... मेरा पति मेरा अपमान करने लगा , एतदनन्तर मेरे पिता ने एक अन्य कुल वाले धनाढ्य पुरुष से मेरा विवाह कर दिया''।

कुंजीभूत शब्द– ***आजीविकोपार्जन, शिल्प एवं कला, दीक्षा, कलाचार्य, शैली, उपाध्यायिका, विदुषी, शास्त्रार्थ, पराजित, शास्त्रीय।***

इस युग में पुनर्विवाह प्रथा भी प्रचलित थी, स्त्रियाँ अपने पति के सम्बन्ध में कुछ भी कहने में असमर्थ होती थी क्योंकि उनको इसी प्रकार की शिक्षा दी जाती थी। धार्मिक शिक्षा– दीक्षा का भी प्रचलन काफी अधिक था। उन्हें धार्मिक कार्य करने में कोई प्रतिबन्ध नहीं था। प्रद्युम्न की बेटी कोकनन्दा भगवान के सम्मुख उपस्थित होकर कहती।– ''मैंने यह अर्थवती गाथा कही। यद्यपि, ऐसे (महान) धर्म के विषय में संक्षेप में मैं उसके सार को कहती हूँ जहाँ तक मेरी बुद्धि की योग्यता है, सारे संसार में कुछ भी पाप करें, अनर्थ करने वाले दुःख को न बढ़ायें।

वैशाली से बहुतसी स्त्रियाँ केश काटकर, काषाय वस्त्र पहनकर, महाप्रजापति गौतमी के साथ खुले पैरों तथा धूल भरे शरीर से रोती हुई महावन की कूटागार शाला के समक्ष खड़ी हुई। इसे देखकर आनन्द ने तथागत से उसके लिए प्रव्रज्या की अनुमति माँगी और अन्ततोगत्वा तथागत ने उन्हें संघ में प्रविष्ट होने की अनुमति दे दी।[4]

थेरी गाथा में नन्दतुरा नामक भिक्षुणी अपने उद् गारों की अभिव्यक्ति करती हुयी कहती हैं" मैं अग्नि, चन्द्रमा, सूर्य और अनेक देवताओं की पूजा, वन्दना करती थी। नदी के घाटों में जाकर डुबकी लगाती थी आधे सिर का मुण्डन पृथ्वी पर सोना, रात्रि का भोजन का त्याग आदि। इस पर मैं अनेक व्रतों का पालन करती थी'' ये अमावस्या– पूर्णमासी और प्रत्येक पक्ष की अष्टमी को इसलिए वृत रहती थी जिससे कि उन्हें स्वर्ग की प्राप्ति हो। 'ऋषिदासियों को घर पर ही धर्माचरण करने की ही अनुमति प्राप्त थी किन्त ऋषिदासी के आग्रह पर अन्त में उसके पिता ने प्रव्रज्या लेने की अनुमति दे दी थी। तत्कालीन समाज में धार्मिक दृष्टि से नारियों को पुरुषों के समकक्ष ही माना जाता था, सोमा नामक भिक्षुणी जब समाधि की अवस्था में थी तब उसी समय पापी मार आकर उसे पतिव्रता धर्म से विचलित करने का प्रयास करता है किन्तु उसका भ्रमित न होना, नारियो के धार्मिक कृत्य करने से उन्हें उचित फल मिलता है , द्योतक है , सीमा भिक्षुणी एक जगह अपने उद्गार इस प्रकार प्रकट करती है।" जब चित्त समाहित हो जाता है ज्ञान उपस्थित रहता है और धर्म का पूर्णतया साक्षात्कार हो जाता है तब सीभान क्या करेगा''। ''स्त्रियों को धार्मिक कार्य करने में पुरुष के समान ही फल मिलेगा यह धारणा तत्कालीन समाज में व्याप्त थी। रोहणी द्वारा अपने पिता के श्रम के गुण बताना इस बात का प्रमाण है।[5] यदि स्त्रियों के मन में किसी प्रकार की शंका होती थी तो वह उसके समाधान के लिये महापुरुषों के पास जाया करती थी। भगवान बुद्ध से विशाखा मिगार माता। नकुल माता गृहपत्नी। ''महा प्रजापति गौतमी। आदि नारिया साक्षत् जाकर अपनी शंका समाधान करती थी। इसी प्रकार सुमना।''[6] राजकुमारी पाँच सौ राजकुमारियों के साथ तथा चुन्दी राजकुमारी। धार्मिक भावनाओं से युक्त होकर भगवान बुद्ध के पास जाया करती थी। पतिव्रत धर्म मानने पर कान, नाक आदि काटने का भी दण्ड दिया जाता था। परिवार के कल्याणार्थ देव पूजा संकल्प आदि भी मानती थी। पूजा पाठ करती थी। गृहस्थ जीवन में पतिव्रता रहने, सदाचारणी रहना, कर्तव्य परायण रहना, उनका मुख्य धर्म हो जाता था। इस अनुशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि बौद्ध साहित्य के अनुसार छठी शताब्दी ई.पू. से लेकर छठी सदी तक भारतीय समाज में स्त्रियों का शैक्षणिक जीवन बौद्ध काल में, न तो वैदिक काल की तरह पूर्ण स्वतन्त्र और विकसित था और न मध्यकाल की तरह अत्यन्त ह्रासशील एवं अवनत ही था।[7]

निष्कर्ष– अगर हम बौद्ध दर्शन का अध्ययन करते हैं, तो हम देखते हैं कि बौद्ध दर्शन जिस सामाजिक व्यवस्था व परिवेश में विकसित हुआ, उसकी पूर्व पीठिका उसके धार्मिक चिन्तन व प्रचलित धर्म परम्परा के विरोध में बन गई थी। उस समय कर्म काण्ड व यज्ञाचारित ब्राह्मण धर्म प्रचलित था, जिसमें अनेक कुप्रवृत्तियॉ व विकृत्तियॉ उत्पन्न हो गई थी तथा यज्ञों में पशु हिंसा का प्रयोग सर्वमान्य था। यह व्यवस्था जनसमान्य में असन्तोष का कारण बन रही थी तथा एक सामाजिक परिवर्तन की अनिवार्यता अनुभव की जा रही थी।

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-18, No.- II, Issues-32, YEAR- April-June-2024

इसी सामाजिक परिवर्तन या यों कहे कि सामाजिक समझौते के रूप में बौद्ध धर्म – दर्शन अस्तित्व में आता है।8

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि भगवान बुद्ध ने जिस लोकोपकारी धर्म को जन्म दिया था, उनके मूल में एक सामाजिक समझौता था। उन्होंने कभी भी दलगत विचारधाराओं का समर्थन नहीं किया है। बुद्ध का स्वयं का दर्शन बहुत सी विशेषताएं लिए हुए हैं। एक तरफ स्त्री को नकारते भी है और एक तरफ स्वीकार भी कर रहे हैं। यह बहुत ही सरल, सुगम एवं आचरणीय संदेश रहा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. दिव्यावदान 16/15 , 170/131.
2. रुद्रायणावदान , पृ .496.
3. महावस्तु 2/255/2 , सौदरनन्द 1ध्20. 4. अवदानशतक भाग 2/51/71.
5. जातक ग्रन्थ, भाग 2,1.
6. थेरीगाथा, 126, 27, 28, ऋषिदासी 72/125.
7. संयुक्त निकाय, चुल्लपज्जुनधीतुसुत्त, पृ. 29.
8. उपरोक्त।

*****

ASVP PIF-9.776 /ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14